7

पंचतन्त्र

ध्यान दें:

काव्य कान्ता के समान होता है। उसका अर्थ प्रेमिका जैसे अपने प्रेमी को कथन से सन्मार्ग पर प्रवृत्त करती है वैसे काव्य भी उचित अनुचित के विवेक को उत्पन्न करता है। कथाग्रन्थ का भी यह ही तात्पर्य है। कथा ग्रन्थ भी पशु पक्षियों की कथा के व्याज से हमारा क्या कर्तव्य है क्या अकर्तव्य है, ऐसा उपदेश देता है। जीवन में उन्नति नीतियों के आदर से ही है। कथा ग्रन्थ नीतिमूलक ग्रन्थ भी कहलाते हैं। अर्थात् कथा ग्रन्थों में प्रत्येक कथा की कोई नीति अवश्य होती है। कथाओं में कहीं वक्ता मनुष्य होता हैं और कहीं मनुष्य से अलग प्राणि। इस पाठ में पंचतन्त्र नामक कथाग्रन्थ से दो कथाएँ नीति वाक्यों के साथ उपस्थापन करेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे;

- कथा में वर्णित नीति वाक्यों का ज्ञान प्राप्त कर पाने में;
- कथा रचना विषयक सामान्य परिचय को प्राप्त कर पाने में;
- ग्रन्थ की लेखन शैली का ज्ञान प्राप्त करने में सक्षम होंगे;
- कथा में कही गई नीति को अपने जीवन के परिपालन में प्रयोग कर पाने में;
- समास विषयक ज्ञान प्राप्त कर पाने में;
- वाक्य विन्यास विषयक ज्ञान को प्राप्त कर पाने में;

7.1) प्रथम कथा- मूर्खों का आदर नहीं होता है।

7.1.1) पूर्वपीठिका

अधिक अध्ययन के द्वारा जानना भी मनुष्य के कार्यकाल में उपयोगी नहीं होता है तो अधिक अध्ययन का क्या लाभ है। अधिक समय तक पढ़ा हुआ ज्ञान पुस्तक में स्थित हो तो हास्यापद होता है।

पाठ-7

पंचतन्त्र

ध्यान दें:

क्योंकि उसके प्रयोग का वास्तविक ज्ञान नहीं है। वास्तविक ज्ञान के अभाव से शास्त्र से कभी अन्य बोध होता है। और जानकर कभी समाज में विपत्ति का जनक होता है। देखा गया है कि कोई शास्त्र को अन्यथा व्याख्यायित करता है उससे समाज में अनेक प्रकार के विघ्न उपस्थित होते हैं। इसलिए अध्ययन से प्राप्त ज्ञान का कैसे उपयोग करना चाहिए इस विषय में विचार करना चाहिए। अर्थात् प्रायोगिक ज्ञान आवश्यक है। अन्यथा उसकी गणना मूर्खों में होती है। संसार में जिनका जैसा आचार व्यवहार है वे विवर्जित मनुष्य शास्त्रों में निपुण होने पर भी हंसी के पात्र हैं। जैसे वे मूर्ख पण्डित हंसी के पात्र हुए। मूर्ख गुरु से विद्या को प्राप्त करके भी उसके उचित प्रयोग में समर्थ नहीं हुए। हालांकि उनमें ग्रन्थ का ज्ञान था परन्तु प्रायोगिक ज्ञान नहीं था। इसलिए कार्यकाल में वह विद्या अभीष्ट अर्थ की बोधक नहीं हुई अपितु अन्य अर्थ को प्रतिपादित किया। ऐसा जानने के लिए मूर्खों का आदर नहीं होता है इस कथा को पण्डित विष्णु शर्मा द्वारा कहा गया। वह कथा ही यहाँ प्रस्तुत की गई है।

7.1.2 मूलग्रन्थ का परिचय

दक्षिण भारत के महिलारोप्याख्य नगर का राजा अमरशक्ति था। और उस राजा के बहुशक्ति, उग्रशक्ति और अनन्तशक्ति तीन पुत्र थे। और वे मूर्ख थे। उन तीन मूर्ख पुत्रों को शिक्षत करने के लिए राजा ने पण्डित विष्णुशर्मा से अनुरोध किया। तब पारितोषिक के बिना ही उन्हें पढ़ाने के लिए विष्णुशर्मा ने सहमति दी और कहा यदि छः महीने के अन्दर वे शिक्षित नहीं हुए तो मैं मृत्युदण्ड से दण्डित होऊं। उसके बाद उसने पशु आदि को आधार बनाकर कथा के माध्यम से राजकुमारों को उपदेश दिया। समय के साथ उनमें उचित विवेक उत्पन्न हुआ। इस प्रकार उनकी शिक्षा के समाप्त होने के बाद उसने उनको उद्देश्य करके कथित कथाओं का संग्रह करके पंचतन्त्र नामक ग्रन्थ को रचा। ग्रन्थ के नाम से ही बोध होता है कि इस ग्रन्थ में पांच तन्त्र हैं। और वे तन्त्र इस प्रकार हैं-

- मित्रभेदः (मित्रों में मनमुटाव एवं अलगाव)
- मित्रलाभः (मित्र प्राप्ति एवं उसके लाभ)
- काकोलूकीयम् (कौवे एवं उल्लुओं की कथा)
- लब्धप्रणाश (मृत्यु या विनाश के आने पर, यदि जान पर आ बने तो क्या)
- अपरीक्षितकारकम् (जिसको परखा नहीं गया हो उसे करने से पहले सावधान रहें, हड़बड़ी में कदम न उठायें)

प्रस्तुत यह कथा इसके पंचम तन्त्र अपरीक्षित कारक से ली गई है।

7.1.3) प्रथम कथा - मूर्खों का आदर नहीं होता है- मूलपाठ- विभाग-1

कस्मिंश्चिदधिष्ठाने चत्वारो ब्राह्मणाः परस्परं मित्रतांगता वसन्ति स्म। बालभावे तेषां मतिरजायत- भो, देशान्तरं गत्वा विद्याया उपार्जनं क्रियते। अथान्यस्मिन्दिवसे ते ब्राह्मणाः परस्परं निश्चयं कृत्वा विद्योपार्जनार्थं कान्यकुब्जे गताः। तत्र च विद्यामठं गत्वा पठन्ति। एवं द्वादशाब्दानि यावदेकचित्तया पठित्वा, विद्याकुशलास्ते सर्वे संजाताः। ततस्तैश्चतुर्भिर्मिलित्वोक्तम्- वयं सर्वविद्यापारंगता। तदुपाध्यायमुत्कलापयित्वा

ध्यान दें:

स्वदेशे गच्छाम:। एवं मन्त्रयित्वा तथैवानुष्ठीयतामित्युक्त्वा ब्राह्मणा उपाध्यायमुत्कलापयित्वा अनुज्ञां लब्ध्वा पुस्तकानि नीत्वा प्रचलिता यावत्किंचिन्मार्गं यान्ति, तावद् द्वौ पन्थानौ समायातौ। दृष्ट्वा उपविष्टा: सर्वे। तत्रैक: प्रोवाच- 'केन मार्गेण गच्छाम:।' एतस्मिन्समये तस्मिन् पत्तने कश्चिद्वणिक्पुत्रो मृत:। तस्य दाहार्थे महाजनो गतोऽभूत्। ततश्चतुर्णां मध्यादेकेन पुस्तकमवलोकितम्-

महाजनो येन गत: स पन्था इति।

व्याख्या- किसी स्थान पर चार ब्राह्मण परस्पर मित्रवत् रहते थे। बाल्यावस्था में ही उनको यह बुद्धि उत्पन्न हुई - भो! देशान्तर अर्थात् अन्य देश में जाकर विद्यार्जन करनी चाहिए। फिर अन्य किसी दिन वे ब्राह्मण परस्पर निश्चय करके विद्या उपार्जन के लिए कन्नौज नगर को गए। और वहाँ विद्यालय जाकर परस्पर पढ़ने लगे। इस प्रकार बारह वर्ष तक तन्मयता से पढ़ते हुए वे सभी विद्वान विद्या में कुशल हुए। फिर उन चारों ब्राह्मणों ने मिलकर कहा- हम सब विद्या में पारंगत हुए इसलिए उपाध्याय को सन्तुष्ट कर अपने देश को जाएं। इस प्रकार की मन्त्रणा करके (वैसा ही करे कहकर) ब्राह्मण को सन्तुष्ट कर उनकी आज्ञा लेकर पुस्तकों को लेकर चलें जब तक कुछ मार्ग में जाते तब तक दो मार्ग आए देखकर अर्थात् दो मार्ग दिखें। वे सब बैठ गए। वहाँ एक ने कहा- किस मार्ग से जाए। इसी समय उस नगर में कोई वणिक पुत्र मर गया। उस वणिक पुत्र के दाह के लिए महाजन गए। फिर चारों के बीच में से एक ने पुस्तक खोलकर देखा।

महाजन जिस मार्ग से जाते हैं, वह मार्ग ही श्रेष्ठ है।

सरलार्थ:- किसी नगर में चार ब्राह्मण रहते थे। वे परस्पर मित्र थे। जब वे बालक थे तब उन्होंने सोचा- देश से बाहर जाकर विद्या अर्जन करना चाहिए। इसलिए वे सभी विद्या प्राप्ति के लिए कान्यकुब्ज अर्थात् कन्नौज चले गए। और वहाँ पाठशाला को प्राप्त किया। बारह वर्ष व्यतीत कर वे पढ़ाई समाप्त करके विद्वान हुए। फिर वे आचार्य की आज्ञा को स्वीकार कर अपने देश आ रहे थे। रास्ते में उन्हें दो मार्ग दिखे। किस मार्ग से जाएं यह प्रश्न उत्पन्न हुआ। इस कारण वे सभी वहीं बैठ गए। तब उस नगर में एक वणिक पुत्र मृत्यु को प्राप्त हुआ। सभी उसके शव को लेकर मार्ग से गए थे। तब एक ने पुस्तक देखी और कहा- हम सभी को हमारे ज्येष्ठ जैसा करते हैं वैसा ही अनुसरण करना चाहिए। गुरुजन जो कहते हैं वैसा अपने जीवन में पालन करना चाहिए। उससे हमें सुख प्राप्त होता है। इसलिए किस मार्ग से जाएं इस प्रश्न का 'महाजन जिस मार्ग से जाते हैं, उसी मार्ग से हमें भी जाना चाहिए' यही उत्तर है।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- देशान्तरम् - अन्य: देश: देशान्तरम् इति। तत्पुरुष समास।
- विद्योपार्जनार्थम् - विद्याया: उपार्जनम्। षष्ठी तत्पुरुष।
- उत्कलापयित्वा - पृष्ट्वा धनादिदानेन सन्तोष्य वा। प्राकृतप्रसिद्धोऽयं प्रयोग:।
- वणिक्पुत्र: - वणिज: पुत्र: । षष्ठी तत्पुरुष समास।
- महाजन: - वणिग्जनसमूह:, श्रेष्ठो जनश्च।

ध्यान दें:

7.1.4) प्रथम कथा - मूर्खों का आदर नहीं होता है-मूलपाठ-विभाग-2

तन्महाजनमार्गेण गच्छामः। अथ ते पण्डिताः यावन्महाजनमेलापकेन सह यान्ति, तावद्रासभः कश्चित्तत्र श्मशाने दृष्टः। अथ द्वितीयेन पुस्तकमुद्घाट्यावलोकितम्

उत्सवे व्यसने प्राप्ते दुर्भिक्षे शत्रुसङ्कटे।
राजद्वारे श्मशाने च यस्तिष्ठति स बान्धवः॥

व्याख्या- तब हम सब भी महाजन के मार्ग से जाते हैं। उसके बाद वे पण्डित जब तक महाजन के साथ जाने लगे। उतने में ही श्मशान में कोई गधा दिखा। फिर दूसरे पण्डित ने पुस्तक को खोलकर देखा-

अन्वय- यः उत्सवे व्यसने प्राप्ते दुर्भिक्षे शत्रुसंकटे राजद्वारे श्मशाने च, तिष्ठति सः बान्धवः इति।

अन्वयार्थः- जो आनन्द के समय में, विपत्ति काल में, अन्न अभाव के समय में, शत्रु जब आक्रमण करें उस समय में, राजद्वार में, और शवदाह स्थान में सहायता करता है, वह बन्धु होता है।

तात्पर्यार्थः- कौन प्रकृत बन्धु है इस प्रश्न का यह उत्तर है कि जो सदैव पास में रहता है अर्थात् जैसे सुख के समय में वैसे ही दुख के समय में भी जो पास में होता है। जो आनन्द के समय में आनन्द को बढ़ाता है, दुःख के समय में सान्त्वना को देता है, शत्रु से संकट में सहायक होता है, श्मशान में मुझे छोड़कर नहीं जाता, वह ही सच्चा बन्धु है।

सरलार्थः- इसलिए वे शवयात्रा के साथ चल दिए। कुछ दूर जाकर वे श्मशान में पहुंचे। उस घोर भययुक्त निर्जन श्मशान में एक गधे को उन्होंने देखा। तब दूसरे ने पुस्तक को खोलकर कहा- उत्सव के समय में, विपत्ति काल में, अन्न अभाव में, शत्रु के द्वारा आक्रमण के समय में, राजा की सभा में और श्मशान में जो सदैव पास में रहता है वह ही सच्चा बन्धु है।

7.1.5) प्रथमकथा- मूर्खों का आदर नहीं होता है- मूलपाठ-विभाग-3

तदहो, अयमस्मदीयो बान्धवः। ततः कश्चित्तस्य ग्रीवायां लगति, कोऽपि पादौ प्रक्षालयति। अथ यावत्ते पण्डिताः दिशामवलोकनं कुर्वन्ति, तावत्कश्चिदुष्ट्रो दृष्टः। तैश्चोक्तम् - एतत्किम्। तावत्तृतीयेन पुस्तकमुद्घाटयोक्तम्-

'धर्मस्य त्वरिता गतिः।
तन्नूनमेष धर्मस्तावत्।' चतुर्थेनोक्तम्-
'इष्टं धर्मेण योजयेत्।'
(तद्बान्धवोऽयम् अस्माकं धर्मेण युज्यताम्)

अथ तैश्च रासभ उष्ट्रग्रीवायां बद्धः। (ततु) केनचित्तस्वामिनो रजकस्याग्रे कथितम्। (श्रुत्वा च) यावद्रजकस्तेषां मूर्खपण्डितानां प्रहारकरणाय समायातस्तावत्ते प्रनष्टाः।

व्याख्या- इसलिए यह गधा हमारा बन्धु है। उसके बाद कोई उस गधे की ग्रीवा को सहलाता

ध्यान दें:

है अथवा कोई उसके पैरों को धोता है। उसके बाद ज्यों ही वे पण्डित इधर-उधर देखते हैं, त्यों ही उनमें से किसी ने ऊँट को देखा। और उन्होंने कहा- यह क्या है? तब तीसरे ने पुस्तक खोलकर कहा- धर्म की गति तेज है। यह ऊँट अवश्य ही धर्म है। चतुर्थ पण्डित ने कहा- इष्ट को धर्म के साथ जोड़ना चाहिए। तब उन्होंने गधे को ऊँट की गर्दन में बांधा।

तब यह किसी ने गधे के स्वामी धोबी के आगे कहा। और यह सुनकर जब तक धोबी उन मूर्ख पण्डितों को मारने के लिए आया तब तक वे पलायन कर गए।

सरलार्थः- इस प्रकार सोचकर वे उस गधे की सेवा करते हैं। तब वहाँ एक ऊँट आ गया। यह क्या है उन्होंने पूछा। तब तीसरे ब्राह्मण ने ग्रन्थ को देखकर कहा कि धर्म की गति तेज होती है। तब उसने कहा कि जो हमारा इष्ट है और जो हमारा धर्म है उनको मिलाना चाहिए। इसलिए ऊँट की गर्दन के साथ गधे को जोड़ दिया। इस वृतान्त को किसी ने गधे के पालक से कहा- उसे सुनकर वह पालक दौड़ा। उसे देखकर वे सभी वहाँ से चले गए।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- त्वरिता चपला, अचिन्तनीया, सूक्ष्मा च।

7.1.6 प्रथम कथा- मूर्खों का आदर नहीं होता है- मूलपाठ- विभाग-4

ततो यावद्रग्रे किंचित्स्तोकं मार्गं यान्ति, तावत्काचिन्नदी समासादिता। तस्या जलमध्ये पलाशपत्रमायान्तं दृष्ट्वा पण्डितेनैकेनोक्तम्-

'आगमिष्यति यत्पत्रं तदस्मांस्तारयिष्यति।'

एतत्कथयित्वा तत्पत्रस्योपरि पतितो यावन्नद्या नीयते, तावत्तं नीयमानमवलोक्यान्येन पण्डितेन केशान्तं गृहीत्वोक्तम्

सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पण्डितः।
अर्धेन कुरुते कार्यं सर्वनाशो हि दुःसह॥
इत्युक्त्वा तस्य शिरश्छेदो विहितः।

व्याख्या- उसके बाद जब तक आगे किसी लघु मार्ग को जाते हैं, तब तक कोई नदी मिली। उस नदी के जल में ढाक का पत्ता आया देखकर एक पण्डित ने कहा-

जो यह पत्ता पलाश आ रहा है वह हमारा उद्धार करेगा। ऐसा कहकर उस पत्ते के ऊपर गिरे जब तक नदी उसे बहा ले जाती है, तब तक उस पण्डित को जाता हुआ देखकर दूसरे पण्डित ने बाल पकडकर कहा-

सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पण्डितः।
अर्धेन कुरुते कार्यं सर्वनाशो हि दुःसह॥

अन्वय- सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पण्डितः अर्धेन कार्यं कुरुते हि सर्वनाशः दुःसहः इति।

अन्वयार्थः- विद्वान जन सर्वनाश होने पर आधे भाग को त्याग देते है, आधे भाग से अपने प्रयोजन

ध्यान दें:

को सम्पादित करते है। क्योंकि सब कुछ नष्ट होने के दु:ख को नहीं सहा जा सकता है।

तात्पर्यार्थ:- जब विद्वान विपत्ति में पड़ते हैं, तब वह अपने को जितना है उससे आधा देता है। सम्पूर्ण नहीं देता है। तब कहते हैं कि यदि पूरा दे दें तब उसका दु:ख स्वयं भी नहीं सह सकते।

इस प्रकार कहकर उसका सिर काट दिया।

सरलार्थ:- उसके बाद उनके मार्ग में नदी आ गई। उस नदी में एक पलाश का पत्ता था। उसे देखकर चारों पण्डितों में से एक ने कहा कि यह जो पत्ता आ रहा है वह हमें नदी के तीर को पार कराएगा। इस प्रकार सोचकर वह उसके ऊपर चढ़ गया। तब ही वह नदी में गिर गया। उसे उस प्रकार देखकर एक ने उसे पकड़ा और कहा- विपत्ति आने पर विद्वान आधे से ही कार्य का सम्पादन करते हैं और बचे हुए आधे को त्याग देते हैं। कारण है कि यदि सर्वनाश होता है तो उस दु:ख को स्वयं भी नहीं सहा जा सकता है।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- पलाशपत्रम् - पलाशस्य पत्रम् इति। षष्ठी तत्पुरुष समास। पत्रं वाहनम् नौकादिकम्, पर्णं च। पत्रन्तु वाहने पर्णे इति विश्व:।

7.1.7 प्रथम कथा- मूर्खों का आदर नहीं होता है- मूलपाठ- विभाग-5

अथ तैश्च पश्चाद्गत्वा कश्चिद्ग्राम आसादित:। तेऽपि ग्रामीणैर्निमन्त्रिता: पृथक्पृथक्गृहेषु नीता:। तत: एकस्य सूत्रिका घृतखण्डसंयुक्ता भोजने दत्ता। ततो विचिन्त्य पण्डितेनोक्तं यद्-

'दीर्घसूत्रो विनश्यति'।

एवमुक्त्वा भोजनं परित्यज्य गत:। तथा द्वितीयस्य मण्डका दत्ता:। तेनाप्युक्तम्- 'अतिविस्तारविस्तीर्णं तद्वेन्न चिरायुषम्।'

स च भोजनं त्यक्त्वा गत:। अथ तृतीयस्य वटिकाभोजनं दत्तम्। तत्रापि (तेन) पण्डितेनोक्तं -

'छिद्रेष्वनर्था बहुलीभवन्ति।'

एवं ते त्रयोऽपि पण्डिता: क्षुत्क्षामकण्ठा:, लोकैर्हस्यमानास्तत: स्थानात् स्वदेशं गता:।।

व्याख्या- (इस प्रकार चारों में से एक मर गया।) उसके बाद वे तीनों किसी ग्राम में पहुंचे। उन्हें ग्रामीण भोजन के लिए निमन्त्रित करके अलग-अलग अपने घर ले गए। फिर एक पण्डित को भोजन में सूत्रिका सेमई, जलेबी अथवा घृत खाण्ड सें युक्त भोजन को दिया। फिर उसे देखकर विचार करके पण्डित ने कहा-दीर्घसूत्री नष्ट होता है। ऐसा कहकर भोजन को त्याग कर चल दिया। तथा दूसरे को भोजन में मण्ड मिष्ठान दिए। उसे देखकर उसने भी कहा- अतिविस्तार से विस्तीर्ण चिरायु के निमित्त नहीं होता है। उसके बाद तीसरे को वटिका अर्थात् वड़ा दिया। वहाँ भी उस पण्डित ने कहा - छिद्रयुक्त भोजन अनर्थकारी होते हैं। इस प्रकार तीनों ही पण्डित भूख से व्याकुल होकर संसार में हंसी को प्राप्त करके अपने देश को गए।

ध्यान दें:

सरलार्थः- फिर वे पास में स्थित ग्राम को गए। वहाँ ग्रामीणों ने उनका अभिनन्दन किया। उन्हें अलग-अलग घर में निमन्त्रित किया। एक को भोजन में घी मिश्रित जलेबी दी। उसने सोचा कि उसके आचार्य ने कहा है कि जो दीर्घ सूत्री (आलसी) हैं विनाश को प्राप्त करते हैं। यहाँ दीर्घ सूत्रिका है इसलिए उसने भोजन नहीं किया। दूसरे ब्राह्मण को रोटी दी। उसने सोचा कि गुरु ने कहा है-जिसका अधिक विस्तार होता है उसकी आयु अधिक नहीं होती। इस कारण उसकी मृत्यु शीघ्र होती है। यह सोचकर उसने भोजन को त्याग दिया। तीसरा जो था उसे वटिका भोजन (कचौड़ी) वड़ा दिया। उसने सोचा कि उसके गुरु ने जब पढ़ाया तब कहा कि जहाँ छिद्र होते हैं वहाँ विघ्न अधिक होते हैं। इस भय से उसने भी भोजन को नहीं किया। उन्हें देखकर सभी ग्रामीण हंसे। इस प्रकार वे मूर्ख पण्डित बिना भोजन किए अपने देश को आए।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- घृतखण्डसंयुक्ता- घृतस्य खण्डः घृतखण्डः इति षष्ठी तत्पुरुषः, घृतखण्डेन संयुक्ता इति तृतीया तत्पुरुष समास।
- दीर्घसूत्र- आलस्योपहतः।
- वाटिकाभोजनम् - वटिका वड़ा तस्याः भोजनम् इति। षष्ठी तत्पुरुष समास।
- अनर्थाः- न अर्थाः अनर्थाः इति नञ् तत्पुरुष समास।
- क्षुत्क्षमाकण्ठाः - क्षुता क्षुधया क्षामः शुष्कः इति तृतीय तत्पुरुष समास, क्षुतक्षामः कण्ठः येषां ते क्षुत्क्षामकण्ठाः पण्डिताः इति बहुव्रीहि समास।

पाठगत प्रश्न-7.1

1. चारों विद्या प्राप्ति के लिए कहाँ गए?
2. कान्य कुब्ज में वे कहाँ थे?
3. कितने वर्ष व्यतीत करके उन्होंने अध्ययन किया?
4. कौन-सा रास्ता ठीक है?
5. श्मशान में उन्होंने किसको देखा?
6. इष्ट को किससे जोड़ना चाहिए?
7. कैसी अवस्था में पण्डित आधे को त्याग देते हैं?
8. अति विस्तार से क्या होता है?
9. छिद्रों के अधिक होने पर क्या होता है?
10. कौन नष्ट होता है?

पाठ-7

पंचतन्त्र

ध्यान दें:

7.2) द्वितीय कथा- जहाँ धर्म है वहाँ जीत है।

7.2.1) पूर्वपीठिका

केवल धर्म से ही मनुष्यों का जीवन है, धर्म से हीन पशुओं के समान है। अपने धर्म नीति न्याय आदि को जो त्याग देता है, वह पशु समान ही है। सन्मार्ग पर चलना और अपने धर्म का सदैव पालन करना चाहिए। उससे कभी-कभी अपनी क्षति होती है परन्तु अन्त में सुख ही प्राप्त होगा। यहाँ धर्म बुद्धि कैसे मार्ग पर था यह जानें। धर्म से सुख और अधर्म से दु:ख होता है यह भी जानें। सर्वोपरि धर्म की कैसे विजय होती है, यह जानेंगे।

यह कथा पंचतन्त्र से ली गई है। वहाँ मित्रभेद नामक प्रथमतन्त्र में यह कथा प्राप्त होती है।

7.2.2) द्वितीय कथा- जहाँ धर्म है वहाँ जीत है। मूलपाठ - विभाग-1

कस्मिंश्चिदधिष्ठाने धर्मबुद्धि: पापबुद्धिश्चेति द्वे मित्रे प्रतिवसत: स्म। अथ कदाचित्पापबुद्धिना चिन्तितम्- अहं तावन्मूर्खो दारिद्रयोपेतश्च। तदेनं धर्मबुद्धिमादाय देशान्तरं गत्वास्याश्रयेणार्थोपार्जनं कृत्वैनमपि वंचयित्वा सुखी भवामि। अथान्यस्मिन्नहनि पापबुद्धिर्धर्मबुद्धिं प्राह- भो मित्र, वार्द्धकभावे किं त्वमात्मविचेष्टितं स्मरसि। देशान्तरमदृष्ट्वा कां शिशुजनस्य वार्तां कथयिष्यसि।

व्याख्या- किसी नगर में धर्मबुद्धि और पापबुद्धि दो मित्र रहते थे। फिर कदाचित पापबुद्धि ने विचार किया मैं मूर्ख और दरिद्र हूँ इसलिए धर्मबुद्धि को लेकर अन्य देश को जाकर धर्मबुद्धि के आश्रय से धनार्जन करके इसको भी धन से वंचित करके सुखी हो जाऊँगा।

फिर एक दिन पापबुद्धि ने धर्मबुद्धि को कहा- हे मित्र! वृद्धावस्था में तुम क्या अपनी चेष्टा को स्मरण करोगे। अन्य देश को बिना देखे अपने बालकों से किन बातों को कहोगे।

सरलार्थ:- पहले किसी गाँव में धर्मबुद्धि और पापबुद्धि दो मित्र रहते थे। एक दिन पापबुद्धि ने विचार किया कि वह दरिद्र और मूर्ख है। यदि वह धर्मबुद्धि की सहायता से धन का उपार्जन करेगा, तो धर्मबुद्धि को वंचित करके उसके भी धन को ले लेगा, तब वह धनी हो जाएगा। उसको सुख भी प्राप्त होगा। इस प्रकार विचार कर उसने धर्मबुद्धि के समीप जाकर कहा कि- बहुत दिन से अन्य देश में गमन नहीं हुआ, तब अपने पुत्र आदि से क्या कहोगे।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- दाहिद्रयोपेत: दारिद्रयेण उपेत: दरिद्र: इति यावत्।
- प्राह प्र-आह, ब्रुव: पंचानामादित आह ब्रुव: इत्यनेन विकल्पेन बूते इत्यस्य स्थाने आह इति प्रयोग: पक्षे ब्रुते इत्यपि प्रयोग:।

ध्यान दें:

7.2.3) द्वितीय कथा- जहाँ धर्म है वहाँ जीत है। मूलपाठ - विभाग-2

उक्तंच

देशान्तरेषु बहुविधभाषावेषादि येन न ज्ञातम्।
भ्रमता धरणीपीठे, तस्य फलं जन्मनो व्यर्थम्॥

अन्वय-

येन देशान्तरेषु बहुविधभाषावेषादि न ज्ञातम् धरणीपीठे भ्रमता तस्य जन्मनः फलम् व्यर्थम्।

अन्वयार्थः- जिसके द्वारा अन्य देशों की भाषा वेशभूषा को नहीं जाना गया, पृथ्वी पर विचरण करते हुए उस मनुष्य का जन्म निष्फल है।

सरलार्थः- अनेक प्रकार की भाषाओं और संस्कृति का ज्ञान आवश्यक है। जिसका अनेक प्रकार की भाषा इत्यादि के साथ सम्पर्क नहीं है उसके जन्म का क्या लाभ। अर्थात् जिसको विदेश वृतान्तों का ज्ञान नहीं है उसकी कुएँ के मेंढक के समान उत्पत्ति व्यर्थ ही है यह भाव है।

7.2.4) द्वितीय कथा- जहाँ धर्म है वहाँ जीत है। मूलपाठ - विभाग-3

तथा च-

विद्यां वित्तं शिल्पं तावन्नाप्नोति मानवः सम्यक्।
यावद् व्रजति न भूमौ देशाद्देशान्तरं हृष्टः॥

अन्वय - मानवः हृष्टः सन् यावत् भूमौ देशात् देशान्तरं न व्रजति तावत् विद्यां वित्तं शिल्पं सम्यक् न आप्नोति।

अन्वयार्थः- मनुष्य उत्सुक होकर जब तक अन्य देश को नहीं जाता तब तक विद्या शिल्प कला इत्यादि के ज्ञान को प्राप्त नहीं करता है।

सरलार्थः- चर्चा से विद्या बढ़ती है। इसलिए विद्या प्राप्ति के लिए अनेक मनुष्यों से मिलना चाहिए। जो व्यक्ति अन्य देश को जाकर दूसरों के साथ जब तक नहीं मिलता है, तब तक उसकी विद्या सम्पूर्ण नहीं होती है। इसलिए अन्य देशवासियों से मिलना अत्यन्त आवश्यक है। उससे ज्ञान बढ़ता है, धन भी आता है और कलादि का ज्ञान भी होता है।

7.2.5) द्वितीय कथा- जहाँ धर्म है वहाँ जीत है। मूलपाठ - विभाग-4

अथ स धर्मबुद्धिः तस्य तद्वचनमाकर्ण्य प्रहृष्टमनास्तेनैव सह गुरुजनानुज्ञातः शुभेऽहनि देशान्तरं प्रस्थितः। तत्र च धर्मबुद्धिप्रभावेण भ्रमता पापबुद्धिना प्रभूततरं वित्तमासादितम्। ततश्च द्वावपि तौ प्रभूतोपार्जितद्रव्यौ प्रहृष्टौ स्वगृहं प्रत्यौत्सुक्येन निवृत्तौ।

उक्तंच-

ध्यान दें:

प्राप्तविद्यार्थशिल्पानां देशान्तरनिवासिनाम्।
क्रोशमात्रोऽपि भूभागः शतयोजनवद्भवेत्।।

व्याख्या- उसके बाद पापबुद्धि के वचन को सुनकर उत्सुक मन से धर्मबुद्धि उसके ही साथ गुरुजनों का आशीर्वाद प्राप्त करके शुभ समय पर दिन में अन्य देश के लिए यात्रा को प्रारम्भ किया। और वहाँ धर्मबुद्धि के प्रभाव से घूमते हुए पापबुद्धि ने बहुत सा धन अर्जित किया। फिर दोनों ने ही प्रचुर धन के उपार्जन से आनन्दित होते हुए अपने घर के प्रति उत्कण्ठा से निवृत्त होकर वापिस आना आरम्भ किया। और कहा-

अन्वय- देशान्तरनिवासिनां प्राप्तविद्यार्थशिल्पानां क्रोशमात्रः अपि, भूभागः शतयोजनवद् भवेत् इति।

अन्वयार्थः- विद्या, धन और शिल्पकला का ज्ञान प्राप्त करने के लिए जो अन्य देश में जाकर निवास करते हैं, उनको एक कोस मात्र पृथ्वी भी सौ योजन के समान अर्थात अत्यन्त विस्तृत प्रतीत होती है। जिस प्रयोजन के लिए लोग विदेश जाते हैं वहाँ जब तक धन प्राप्ति नहीं होती है तब तक अपने घर के प्रति निर उत्कण्ठा होती है। करने योग्य कार्य हो जाने पर अपने घर के प्रति अत्यधिक उत्कण्ठित हो थोड़ी देर भी असहनीय प्रतीत होती है अर्थात् थोड़ा मार्ग भी अत्यन्त दूर प्रतीत होता है।

सरलार्थः- पापबुद्धि के इस वाक्य को सुनकर धर्मबुद्धि सहमत हुआ। वह गुरुजन की अनुमति और आशीर्वाद को प्राप्त कर अन्य देश को गया। वहाँ धर्मबुद्धि के कारण पापबुद्धि ने बहुत धन प्राप्त किया। वहाँ से अत्यन्त आनन्द से वे दोनों धन रत्नादि को स्वीकार करके घर की ओर चल दिए।

तात्पर्यार्थः- जब घर की ओर पुत्र विद्या, धनादि को प्राप्त करके आता है तब एक कोस मार्ग भी चार कोस का प्रतीत होता है। इसी प्रकार से अन्य देश में जो विद्या, धन, कलादि को प्राप्त करके अपने घर को आते हैं उसको छोटा मार्ग भी बड़ा प्रतीत होता है।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- गुरुजनानुज्ञातः - गुरुजनैः अनुज्ञातः इति तृतीया तत्पुरुष समास।
- धर्मबुद्धिप्रभावेण - धर्मबुद्धेः प्रभावः इति षष्ठी तत्पुरुष समास।
- प्रभूतोपार्जितद्रव्यौ - प्रभूतम् अनेकम् उपार्जितम् द्रव्यम् याभ्याम् तौ प्रभूतोपार्जितद्रव्यौ इति बहुव्रीहि समास।
- प्राप्तविद्यार्थशिल्पानाम् - प्राप्तः अर्थः विद्या शिल्पं च यैः ते प्राप्तविद्यार्थशिल्पाः इति बहुव्रीहि समास।

7.2.6) द्वितीय कथा- जहाँ धर्म है वहाँ जीत है। मूलपाठ - विभाग-5

अथ स्वस्थानसमीपवर्तिना पापबुद्धिना धर्मबुद्धिरभिहितः - 'भद्र, न सर्वमेतद्धनं गृहं प्रति नेतुं युज्यते, यतः कुटुम्बिनो बान्धवाश्च प्रार्थयिश्यन्ते। तदत्रैव वनगहने क्वापि भूमौ निक्षिप्य, किंचिन्मात्रमादाय गृहं प्रविषावः। भूयोऽपि प्रयोजने संजाते तन्मात्रं समेत्यास्मात् स्थानान्नेश्यावः।

उक्तंच-

ध्यान दें:

न वित्तं दर्शयेत्प्राज्ञः कस्य चित्स्वल्पमप्यहो।
मुनेरपि यतस्तस्य दर्शनाञ्चलते मनः॥

तथा च-

यथामिषं जले मत्स्यैर्भक्ष्यते श्वापदैर्भुवि।
आकाशे पक्षिभिश्चौव तथा सर्वत्र वित्तवान्॥

व्याख्या- उसके बाद अपने स्थान के समीपवर्ती पापबुद्धि ने धर्मबुद्धि से कहा- श्रीमान, यह सब धन घर ले जाना उचित नहीं है क्योंकि आत्मीय जन और बान्धव उसको मागेंगे। इसलिए यहाँ इस घने जगंल में ही कहीं भूमि में गाड़कर उसमें से कुछ लेकर घर को जाएं। प्रयोजन होने पर बचे हुए धन को आकर इस स्थान से ले जाएंगे। और कहा-

अन्वय- प्राज्ञः स्वल्पम् अपि अहो वित्तं न दर्शयेत्। यतः मुनेः मनः अपि, तस्य दर्शनात् चलते।

अन्वयार्थः- विद्वान व्यक्ति अपना थोड़ा धन भी किसी को न दिखाए। क्योंकि मुनि का स्थिरचित्त मन भी धन के दर्शन से अस्थिर हो जाता है।

तात्पर्यार्थः- सीप में रजत का भ्रम होने पर भी मनुष्य उसे प्राप्त करने को भागता है। तब अगर साक्षात धन ही हो तब किसका मन चंचल नहीं होता। शान्तचित्त वाले मुनियों का चित्त भी थोड़े धन को देखने से अस्थिर हो जाता है। इसलिए विद्वान कभी भी अपने धन को किसी को भी नहीं दिखाता है।

अन्वय- यथा आमिषं जले मत्स्यैः भक्ष्यते भुवि श्वापदैः आकाशे पक्षिभिः तथा चौव वित्तवान् सर्वत्र।

अन्वयार्थः- जैसे मांस, जल में मछलियों के द्वारा, पृथ्वी पर सिंहादि हिंसकों के द्वारा, आकाश में पक्षियों के द्वारा खाया जाता है वैसे ही सब जगह धनवान व्यक्ति खाया जाता है। सब ही धन की आकांक्षा करते हैं।

तात्पर्यार्थः- इस श्लोक में धन की प्राप्ति में कौन-कौन से विघ्न होते हैं यह ही वर्णित किया गया है। यहाँ कहते हैं सब मांस की इच्छा करते हैं। यदि जल में है तो मछलियाँ खाती हैं। यदि पृथ्वी पर है तो प्राणी को खाते हैं। अगर आकाश में है तो पक्षी उसे खाते हैं। इसी प्रकार जो धनवान होता है सभी उसके धन की इच्छा करते हैं।

सरलार्थः- जब वे घर के समीप आ गए तब पापबुद्धि ने कहा कि घर में आत्मीय जन हैं। उनके पास सारा धन नहीं ले जाना चाहिए। घर के पास में कहीं भी गड्ढा करके वहाँ धन को रख देते हैं जितना प्रयोजन है उतना लेकर चलते हैं यह ही उचित है। जब प्रयोजन होगा तब फिर से ले जाएंगे। क्योंकि धन इस प्रकार की वस्तु है कि स्थिर चित्त मुनि के मन में भी विकार उत्पन्न कर दे। धनवान के सभी जगह शत्रु विद्यमान रहते हैं।

7.2.7) द्वितीय कथा- जहाँ धर्म है वहाँ जीत है। मूलपाठ - विभाग-6

तदाकर्ण्य धर्मबुद्धिराह- ''भद्र, एवं क्रियताम्''। तथानुष्ठिते द्वावपि तौ स्वगृहं गत्वा सुखेन

पाठ-7

पंचतन्त्र

ध्यान दें:

संस्थितवन्तौ। अथान्यस्मिन्नहनि पापबुद्धिर्निशिथेऽटव्यां गत्वा तत्सर्वं वित्तं समादाय गर्तं पूरयित्वा स्वभवनं जगाम। अथान्येद्युर्धर्मबुद्धिं समभ्येत्य प्रोवाच- सखे, बहुकुटुम्बा वयम्, वित्ताभावात्सीदामः। तद्गत्वा तत्र स्थाने किंचिन्मात्रं धनमानयावः। सोऽब्रवीत्- एवं क्रियताम्। अथ द्वावपि गत्वा तत्स्थानं यावत्खनतस्तावद्रिक्तं भाण्डं दृष्टवन्तौ। अत्रान्तरे पापबुद्धिः शिरस्ताडयन्प्रोवाच- 'भो धर्मबुद्धे, त्वया हृतमेतद्धनम्, नान्येन, यतो भूयोऽपि गर्तापूरणं कृतम्। तत्प्रयच्छ में तस्यार्धम्। अथवाहं राजकुले निवेदयिष्यामि। स आह-'भो दुरात्मन्, मैवं वद-धर्मबुद्धिः खल्वहम्। नैतच्चौरकर्म करोमि। उक्तंच-

मातृवत्परदाराणि परद्रव्याणि लोष्टवत्।
आत्मवत्सर्वभूतानि वीक्षन्ते धर्मबुद्धयः॥

व्याख्या- यह सुनकर धर्मबुद्धि ने कहा- भद्र जैसा तुम्हें ठीक लगे वैसा करो। वैसा ही सम्पादित करके वे दोनों भी अपने घर जाकर सुख से स्थित हुए। फिर किसी और दिन पापबुद्धि ने रात्रि में वन को जाकर उस सारे धन को लेकर गड्ढे को वैसे ही भर दिया जैसा पूर्व में था। वैसा करके अपने घर को चला गया। फिर अन्य किसी दिन धर्मबुद्धि के पास आकर बोला- मित्र हम अनेक सदस्य हैं इसलिए धन के अभाव में क्लेश होता है। इसलिए वहाँ जाकर कुछ धन ले आयें। वह बोला- मित्र ऐसा ही करें। फिर दोनों ने उस स्थान को जब खोदा तब खाली बर्तन को देखा। इसके बाद पापबुद्धि ने सिर पीटते हुए कहा- हे धर्मबुद्धि तुमने ही इस धन को चुरा लिया है किसी और ने नहीं। क्योंकि यदि चोर लेते तो पुनः मिट्टी से गड्ढे को नहीं भरते। तुमने ही इस धन को चुराया है इसलिए चोरी को छिपाने के लिए तुमने ही गड्ढे को भर दिया। इसलिए उस चोरी किए हुए धन का आधा भाग मुझे दें। अन्यथा राजकुल में निवेदन करुंगा।

वह बोला- हे दुष्ट बुद्धि ऐसा मत कह, निश्चय ही मैं धर्मबुद्धि हूँ। इस प्रकार से चोरी नहीं करता। और कहा-

अन्वय- धर्मबुद्धयः परदाराणि मातृवद्, परर्द्रव्याणि लोष्ठवत्, सर्वभूतानि आत्मवत् वीक्षन्ते।

अन्वयार्थः- जिन में धर्म बुद्धि हो वे व्यक्ति दूसरे की स्त्रियों को माता के समान, दूसरे के धन को मिट्टी के समान और सभी प्राणियों को आत्मा के समान देखते हैं।

तात्पर्यार्थः- इस श्लोक में जो धर्म मार्ग को जाते हैं उनकी नीति को वर्णित किया गया है। वे दूसरे की पत्नी को माता के समान देखते हैं, उनमें सदैव श्रद्धा रखते हैं अर्थात् उसे प्राप्त करने की कभी इच्छा भी नहीं करते हैं। वे दूसरों के धन को पत्थर के समान देखते हैं। अर्थात् उनके धन का लोभ नहीं करते हैं। और वे सभी को अपने समान देखते हैं। इसलिए वे कभी भी दूसरे का अपकार नहीं करते हैं।

सरलार्थः- इस प्रकार विचार कर धर्मबुद्धि उसे स्वीकार करके समीप ही भूमि में धनादि को स्थापित करके घर को गया। पापबुद्धि ने एक दिन जाकर सारे धन को लेकर गड्ढे को पहले की तरह ही करके घर को आ गया। दूसरे दिन उसने धर्मबुद्धि के समीप जाकर कहा कि धन की आवश्यकता है। इसलिए वहाँ चलते हैं। धर्मबुद्धि उसके साथ वहाँ गया। वहाँ जाकर उन दोनों ने देखा कि वह स्थान खाली है। तब उसे देखकर पापबुद्धि ने धर्मबुद्धि के ऊपर दोषारोपण करके कहा कि उस धर्मबुद्धि ने ही धन को चुराया है। वह राजा को कहेगा ऐसा कहा। तब धर्मबुद्धि ने कहा कि इस प्रकार की चोरी वह कभी नहीं करता है। उसे दूसरे के धन का लोभ नहीं है।

ध्यान दें:

7.2.8 द्वितीय कथा- जहाँ धर्म है वहाँ जीत है। मूलपाठ - विभाग-7

एवं द्वावपि तौ विवादमानौ धर्माधिकरणं गतौ, प्रोचतुश्च परस्परं दूषयन्तौ। अथ धर्माधिकरणाधिष्ठितपुरुषैः दिव्यार्थे यावत् नियोजितौ, तावत्पापबुद्धिराह-'अहो, न सम्यग्दृष्टोऽयं न्यायः। उक्तंच-

विवादेऽन्विष्यते पत्रं तदभावेऽपि साक्षिणः।
साक्ष्यभावात्ततो दिव्यं प्रवदन्ति मनीषिणः॥

तदत्र विषये मम वृक्षदेवताः साक्षीभूतास्तिष्ठन्ति, ता अप्यावयोरेकतरं चोरं साधु वा कथयिष्यन्ति। अथ तौ सर्वैरभिहितम्- भोः, युक्तमुक्त भवता। उक्तंच-

अन्त्यजोऽपि यदा साक्षी विवादे सम्प्रजायते।
न तत्र विद्यते दिव्यं किं पुनर्यत्र देवताः॥

तदस्माकमप्यत्र विषये महत्कौतूहलं वर्त्तते। प्रत्यूषसमये युवाभ्यामप्यस्माभिः सह तत्र वनोद्देशे गन्तव्यम् इति। एतस्मिन्नन्तरे पापबुद्धिः स्वगृहं गत्वा स्वजनकमुवाच-तात, प्रभूतोऽयं मयार्थो धर्मबुद्धिश्चोदितः। स च तव वचनेन परिणतिं गच्छति, अन्यथास्माकं प्राणैः सह यास्यति। स आह- वत्स, द्रुतं वद, येन प्रोच्यं तद् द्रव्यं स्थिरतां नयामि। पापबुद्धिराह- तात, अस्ति तत्प्रदेशे महाशमी। तस्यां महत्कोटरमस्ति। तत्र त्वं साम्प्रतमेव प्रविश। ततः प्रभाते यदाहं सत्यश्रावणं करोमि, तदा त्वया वाच्यं यद्-धर्मबुद्धिः चोरः इति।

व्याख्या- इस प्रकार वे दोनों भी झगड़ा करते हुए धर्माधिकारी के पास अर्थात् राजकुल को गए और वे दोनों बोलते हुए एक-दूसरे पर आरोप लगाते हैं। इसके बाद धर्माधिकारी द्वारा नियुक्त पुरुष के द्वारा दिव्य शपथ के निमित्त उसको जब तक नियुक्त किया तब तक पापबुद्धि ने कहा- आश्चर्य है यह उचित न्याय नहीं है, और कहा-

अन्वय- विवादे पत्रम् अन्विष्यते, तदभावेऽपि साक्षिणः अन्विष्यन्ते, ततः साक्ष्यभावात् दिव्यम् मनीषिणः प्रवदन्ति।

अन्वयार्थः- मुकदमा होने पर पहले प्रमाण का लेख लिया जाता है, और पत्र के अभाव में साक्षी का ग्रहण करते हैं और साक्षी के अभाव में शपथ प्रमाण है ऐसा विद्वानों द्वारा कहा गया है।

फिर इस विषय में वृक्ष देवता मेरे साक्षी हैं। वे ही हम दोनों में से एक चोर अथवा साधु का निर्धारण करेंगे। फिर उन सब ने कहा- आपने सत्य कहा। और कहा-

अन्वय- विवादे अन्त्यजोऽपि यदा साक्षी सम्प्रजायते तत्र दिव्यम् न विद्यते। यत्र देवताः तत्र पुनः किम्।

अन्वयार्थः- जब विवाद में अन्तयज भी साक्षी हो वहाँ शपथ नहीं ली जाती। उसकी आवश्यकता नहीं है। फिर जहाँ देवता हो वहाँ कैसी शपथ। इसलिए हमें भी इस विषय में अत्यन्त उत्सुकता है। प्रातःकाल तुम दोनों अर्थात् धर्मबुद्धि और पापबुद्धि को हमारे साथ उस वन में जाना चाहिए। इसके बाद में पापबुद्धि ने अपने घर जाकर अपने पिता से कहा- हे तात! मैंने धर्मबुद्धि के बहुत से धन को चुरा लिया है। और वह तुम्हारे कथन से परिणत हो पाएगा। यदि वह नहीं होता तो हमारे प्राणों के साथ वह धन चला जाएगा।

ध्यान दें:

पिता ने कहा- हे पुत्र शीघ्र कहो जिसे कहकर वह द्रव्य स्थिरता को प्राप्त करें। पापबुद्धि ने कहा- पिता! इस प्रदेश में महाशमी का एक वृक्ष है। उस शमी वृक्ष में एक बड़ा कोटर है। उस कोटर में तू अभी प्रवेश कर जा। फिर प्रातः काल जब मैं सत्य को ज्ञात करने की इच्छा करूँ कि कौन चोर है, तब तुम कहना कि धर्मबुद्धि चोर है।

सरलार्थः- तब वे दोनों धर्माधिकारी के समीप गए। तब पापबुद्धि ने उनसे कहा कि जहाँ विवाद होता है वहाँ यदि प्रमाणादि प्राप्त न हो तो देवता के समीप जाना चाहिए। सभी वन देवता के समीप जाएंगे फिर उसके प्रमाण को प्राप्त करेंगे। उससे सुविचार होगा। तब सभी ने उसके वाक्यों को स्वीकार किया। दूसरे दिन जाने के लिए समय निश्चित हुआ। उस दिन रात्रि में पापबुद्धि ने अपने पिता को कहा। कि उसने सारे धन को चुराया है। कल उस शमीवृक्ष पर बैठ जाना। जब सभी प्रश्न करेंगे तब ऐसा कहना कि धर्मबुद्धि ने ही धन को चुराया है। पुत्र की रक्षा के लिए पिता सुबह उस वृक्ष की कोटर में बैठ गया।

7.2.9) तथानुष्ठिते प्रत्यूषे स्नात्वा पापबुद्धिर्धर्मबुद्धिपुरः सरो धर्माधिकरणकैः सह तां षमीमभ्येत्य तारस्वरेण प्रोवाच-

आदित्यचन्द्रावनिलोऽनलश्च द्यौर्भूमिरापो हृदयं यमश्च।
अहश्च रात्रिश्च उभे च सन्ध्ये धर्मश्च जानाति नरस्य वृत्तम्॥

भगवति वनदेवते, आवयोर्मध्ये यश्चोरस्तं कथय। अथ पापबुद्धिपिता शमीकोटरस्थः प्रोवाच- भोः, श्रृणुत, श्रृणुत, धर्मबुद्धिना हृतमेतद्धनम्। तदाकर्ण्य सर्वे ते राजपुरुषा विस्मयोत्फुल्ललोचना यावद्धर्मबुद्धेर्वित्तहरणोचितं निग्रहं शास्त्रदृष्टयावलोकयन्ति, तावद्धर्मबुद्धिनातच्छमीकोटरं वह्निभोज्यद्रव्यैः परिवेष्टय वह्निना सन्दीपितम्। अथ ज्वलति तस्मिंशमीकोटरेऽर्धदग्धशरीरः स्फुटितेक्षणः करुणं परिदवयन्यपापबुद्धिपिता निश्चक्राम। ततश्च तैः सर्वैः पृष्टः - भोः किमिदम्। इत्युक्ते च पापबुद्धिविचेष्टितं सर्वम् इदमिति निवेदयित्वोपरतः।

व्याख्या- ऐसा कर प्रातः स्नान करके पापबुद्धि ने धर्मबुद्धि को आगे करके धर्माधिकारियों के साथ उस शमीवृक्ष के समीप आकर ऊँचे स्वर से कहा-

अन्वय- नरस्य वृत्तम् आदित्यः चन्द्रः अनिलः अनलः च द्यौः भूमिः हृदयं यमः च अहः च रात्रिः च उभे सन्ध्ये च धर्मः जानाति।

अन्वयार्थः- मनुष्य के चरित्र को सूर्य, चन्द्रमा, वायु, अग्नि, आकाश, पृथ्वी, मन, यम, दिन-रात, और दोनों संध्या धर्म जानते हैं।

तात्पर्यार्थः- इस श्लोक में कौन धर्म को जानते हैं, ज्ञात होता है। सूर्य, चन्द्र, वायु, अग्नि, आकाश, पृथ्वी, वरुण, यम, दिन, रात, सन्ध्याकाल ये धर्म को जानते हैं।

हे वनदेवता! हम दोनों में से कौन चोर है उसे कहो।

इसके बाद पापबुद्धि का पिता शमी वृक्ष की गर्त में स्थित हो बोला- हे सुनो। धर्मबुद्धि ने यह धन चुराया है। उसे सुनकर वे सभी राजपुरुष विस्मय से खिले नेत्र वाले जब तक धर्मबुद्धि पर धन हरण के उचित दण्ड को शास्त्र दृष्टि से देखते तब तक धर्मबुद्धि ने उस शमीवृक्ष के कोटर में तृणादि द्रव्य से ढककर उसमें आग लगा दी। तब उस शमी कोटर के जलने पर अर्धदग्ध शरीर वाला करुणा स्वर से चिल्लाता हुआ पापबुद्धि का पिता बाहर आया। तब उन सभी ने जिज्ञासा से पूछा- यह क्या है? ऐसा

ध्यान दें:

कहने पर वह 'यह सब पापबुद्धि की चेष्टा है' निवेदन करके मर गया।

सरलार्थः- फिर सभी उस शमीवृक्ष के समीप को गए। वहां सभी ने पूछा कौन चोर है। तब वृक्ष के मध्य से पापबुद्धि के पिता ने उत्तर दिया कि धर्मबुद्धि ने धन को चुराया है। उस वाक्य को सुनकर जब सभी धर्मबुद्धि के दण्ड के विषय में चर्चा कर रहे थे। तब धर्मबुद्धि ने उस वृक्ष में आग लगा दी। तब ताप के प्रभाव से पापबुद्धि के पिता बाहर आए। उन्होंने बाहर आकर सारे वृतान्त को कह दिया। तब सभी ने धर्मबुद्धि की प्रशंसा की और पापबुद्धि के लिए दण्ड को घोषित किया।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- विस्मयोत्फुल्लोचनाः - विस्मयेन उत्फुल्लम् विस्मयोत्फुल्लम्। तृतीया तत्पुरुष समास।
- तच्छमीकोटरम् - शम्याः कोटरम् शमी कोटरम्, षष्ठी तत्पुरुष समास, तच्च इदम् शमीकोटरम्, कर्मधारयसमास।
- अर्धदग्धशरीरः - अर्धं दग्धं शरीरं यस्य सः अर्धदग्धशरीरः। बहुव्रीहि समास।
- स्फुटितेक्षणः - स्फुटितम् विनष्टम् ईक्षणम् नेत्रम् यस्य सः स्फुटितेक्षणः बहुव्रीहिसमास।

7.2.10) द्वितीयकथा-

अथ ते राजपुरुषाः पापबुद्धिं शमीशाखायां प्रतिलम्ब्य धर्मबुद्धिं प्रशस्येदमूचुः - अहो, साध्विदमुच्यते-

उपायं चिन्तयेत्प्राज्ञस्तथापायं च चिन्तयेत्।
पश्यतो बकमुखस्य नकुलेन हता बकाः॥

व्याख्या- उसके बाद वे राजपुरुष पापबुद्धि को शमी वृक्ष की शाखा से बांधकर धर्मबुद्धि की प्रशंसा करके पारितोषिक आदि देकर यह बोले- यह सत्य ही कहा है-

अन्वय- प्राज्ञः यथा उपायं चिन्तयेत् तथा अपायं च चिन्तयेत्। नकुलेन बकमुखस्य पश्यतः बकाः हताः।

अन्वयार्थः- जैसे बुद्धिमान व्यक्ति उपाय की चिन्ता करें वैसे ही विनाश की करें। वहाँ कहा है- उस बगुले के देखते हुए नेवले के द्वारा बगुला मारा गया।

तात्पर्यार्थः- दुष्ट के साथ दुष्टता का व्यवहार करना चाहिए यही नीति है। किसी का भी उपकार जैसा करना चाहिए, वैसा यदि वह अपकार को करता है, तब उसकी दण्डव्यवस्था जैसी होगी वह भी सोचना चाहिए। इसलिए विद्वान जैसे उपाय के विषय में सोचते हैं, वैसे उपाय के विषय में भी सोचते हैं।

पाठगत प्रश्न-2

1. दो मित्र कौन थे?
2. किसका जन्म व्यर्थ है?
3. वनदेवता कहाँ रहते थे?

पाठ-7

पंचतन्त्र

ध्यान दें:

4. धर्मबुद्धि दूसरे की स्त्री को कैसे देखता है?
5. धर्मबुद्धि के पास में क्या मिट्टी के समान है?
6. धर्मबुद्धि कैसे सभी को देखता है?
7. विचार के लिए वे दोनों किसके पास गए?
8. विद्वान क्या सोचें?

पाठ सार

इस पाठ में पंचतन्त्र से कथा को लिया गया है। उसमें चार मूर्खों का वर्णन किया है। उन्होंने विद्या प्राप्त करके शास्त्र के अर्थ को नहीं समझा। वे विद्या प्राप्ति के लिए कन्नौज गए। वहाँ बारह वर्ष व्यतीत कर अध्ययन को समाप्त करके आते हुए महाजन के मार्ग से जाकर श्मशान पहुँच गए। दूसरा नदी को पार करते हुए जब उनमें से एक डूब रहा था तब सब कुछ नहीं हारना चाहिए ऐसा सोचकर उसके मस्तक को काटकर रक्षा करता है। अन्य जब गाँव को गए तब सूत्रिका आदि को देखकर दीर्घसूत्रादि व्याख्यान को याद करके नहीं खाता। इस कथा के पढ़ने से ज्ञात होता है कि मूर्ख पण्डितों की विद्या प्राप्ति व्यर्थ है। क्योंकि वह अर्थ को बिना समझे ही शास्त्र को पढ़ेंगे। उनसे शास्त्रार्थ का विपरीत अर्थ ही होगा।

द्वितीय कथा भी पंचतन्त्र से ली गई है। यहाँ धर्मबुद्धि से सम्पन्न कैसा व्यवहार करते हैं, कैसा जीवन यापन करते हैं इस विषय में जानते हैं। पापबुद्धि अधिक धन लाभ के लिए धर्मबुद्धि को लेकर व्यापार के लिए गया। वहाँ से आते हुए धन को घर के समीप में स्थापित कर दिया। दूसरे दिन पापबुद्धि ने आकर सभी धन को लेकर अपने घर में रख दिया। फिर एक दिन वह धन के लिए धर्मबुद्धि को लेकर आया। फिर वहाँ धन नहीं है ऐसा देखकर धर्मबुद्धि को लेकर नाटक करते हुए धर्माधिकारी को कहा। फिर सभी ने स्वीकार किया कि वन देवता जो कहेंगे वह ही उचित विचार होगा। तब पापबुद्धि ने अपने पिता को शमीवृक्ष के कोटर में स्थित होकर धर्मबुद्धि को चोर कहने के लिए कहा। जब उसके पिता ने वैसा कह दिया तब विचार के समय में धर्मबुद्धि ने उस वृक्ष में आग लगा दी। उससे बाहर आकर पापबुद्धि के पिता ने सारे वृतान्त को कह दिया। तब सभी ने धर्मबुद्धि की प्रशंसा की और पापबुद्धि को दण्डित किया। यह ही कथा का सार है।

आपने क्या सीखा

1. मूर्ख पण्डित हर जगह हेय समझे जाते हैं
2. विद्वानों की सब जगह पूजा होती है।
3. धर्म का मूल सुख ही है।
4. धर्म के मार्ग पर सदैव प्रवृत्त होना चाहिए।
5. अपने धर्म में मरना भी कल्याणकारक है और दूसरे का धर्म भयावह है।
6. दुष्ट के साथ दुष्टता का आचरण करना चाहिए।

पाठ-7

पंचतन्त्र

ध्यान दें:

योग्यता विस्तार

ग्रन्थ विस्तार

हमारा कथा साहित्य जीवन में रास्तों के समान ही है। वहाँ हर कदम कैसा व्यवहार करना चाहिए इस विषय पर बहुत कहा गया है। यहाँ कथा की विस्तृत व्याख्यादि को पढ़कर के यदि अध्येता अधिक ज्ञान को प्राप्त करने की इच्छा करते हैं तो वे-

1. आचार्य श्री सीताराम शास्त्री द्वारा विरचित पंचतन्त्र की भाषानाम्नी हिन्दी टीका को पढें।

भाव विस्तार

1. यहाँ जो कथा वर्णित है उस पर आप नाटक को कर सकते हैं।
2. छात्रों को सरलता से उपदेश के अवसर पर इस कथा को कह सकते हैं।
3. धर्मबुद्धि जैसा आचरण करता है वैसा ही आचरण करना चाहिए।
4. अनेक विवेकबोधी वाक्यों का जीवन में पालन करना चाहिए।
5. यहाँ राजा सुदर्शन और मन्त्रियों के चरित्र को देखना चाहिए।

भाषा विस्तार

1. यहाँ जो समास वर्णित हैं उनकी तालिका बनाओ।
2. यहाँ वर्णित कठिन पदों की अर्थ सहित तालिका को बनाओ।
3. जो नए शब्द ज्ञात हुए उनका लिखते समय प्रयोग करें।

पाठान्त प्रश्न

1. चारों श्मशान वृतान्त को वर्णित कीजिए।
2. गाँव में भोजन के समय उन्होंने क्या किया।
3. उनके गुरुगृह से आने के वृतान्त को विस्तार से बताइए।
4. धर्मबुद्धि के स्वभाव का वर्णन कीजिए।
5. विद्वान कैसे सोचते हैं?
6. धर्मबुद्धि ने किस प्रकार से उपाय को किया।
7. धर्म का पालन करने से क्या होता है। कथा को आश्रित कर व्याख्या कीजिए।

पाठ-7

पंचतन्त्र

ध्यान दें:

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

उत्तर-1

1. कान्यकुब्ज गए।
2. गुरुकुल
3. बारह वर्ष
4. महाजन जिससे जाए
5. गधे को
6. धर्म से
7. सब नष्ट होने पर
8. आयु कम होगी
9. अनर्थ
10. दीर्घसूत्री

उत्तर-2

11. धर्मबुद्धि और पापबुद्धि।
12. जिसे अन्य देश की बहुत सी भाषाओं का ज्ञान न हों।
13. शमीवृक्ष पर।
14. माता के समान।
15. दूसरे का धन।
16. अपने समान ।
17. धर्माधिकारी के पास।
18. उपाय और अपाय को।